द्वारा

आशीष सिसोदिया

लोकगीत -

 लोकगीत लोकसाहित्य की विधा है। लोकगीत संपूर्ण सृष्टि में व्याप्त लोकमानस की सुख-दुःखात्मक अनुभूतियों की सरस रागात्मक अभिव्यंजना का लयात्मक उपहार है। लोकगीतों में लोकमानस के विविध भावों का प्रकटीकरण होता है। जैसे हर्ष-विषाद, प्रेम-ईष्र्या, मान-अपमान, घृणा, भय, आश्चर्य, ग्लानि, क्षोभ, वीरता, वात्सल्य, भक्ति आदि। ये भाव सरल, सरस रामात्मक रूप में व्यक्त होते हैं। लोकगीतों में मानव मन की अनंत भावनाओं एवं कल्पनाओं का ब्रह्माण्ड समाया हुआ है। यहाँ बचपन की लोरियाँ, यौवन के गीत, गृहस्थ के क्रियाकलाप, बुढ़ापे की भक्ति सभी सम्मिलित है। रूठना-मनाना, मिलना-बिछड़ना, हँसना-रोना, ताना-उलाहना, रीझना-खीझना आदि भाव लोकगीतों में दिखाई देते हैं।

 लोकगीत एक कंठ से दूसरे कंठ तक पीढ़ी-दर-पीढ़ी यात्रा करते हैं। फिर भी ये कभी बासी नहीं होते हैं क्योंकि उनमें स्वतः ही नवीनता का समावेश हो जाता है। ये प्राचीन होते हुए भी नित्य नूतन हैं। ये शास्त्रीय गायन की उठा-पटक से कोसों दूर सरलता एवं सरसता से ओतप्रोत हैं। इनमें निहित मिठास इतनी कर्णप्रिय होती है कि श्रोता मुग्ध हो बरबस ही झमने लगते हैं।

 लोक गीतों के उद्गम के संबंध में देवेन्द्र सत्यार्थी लिखते हैं - ’’कहाँ से आते हैं इतने गीत ? स्मरण-विस्मरण की आँख मिचैली से। कुछ अहसास से, कुछ उदास हृदय से। कहाँ से आते हैं इतने गीत? जीवन के खेत में उगते हैं ये गीत। कल्पना भी अपना काम करती है, रसवृत्ति और भावना भी, नृत्य का हिलोरा भी, पर ये सब हैं खाद। जीवन के सुख-दुःख ये हैं लोकगीतों की बीज।’’

 श्री सत्यार्थी के अनुसार ’’लोकगीत लोकसंस्कृति के मुँह बोलते चित्र हैं। लोकगीत हृदय के खेत में उगते हैं। सुख के गीत उमंग के जोर से जन्म लेते हैं तथा दुःख के गीत खोलते लहु से पनपते हैं और आँसूओं के साथ बहते हैं।‘‘ डाॅ० नंदलाल कल्ला लोकगीतों की विशेषताएँ बताते हैं, ’’लोकगीतों में शास्त्रीय नियमों का बंधन नहीं होता। ये आकाश की तरह उन्मुक्त एवं पवन की तरह स्वच्छंद होते हैं। इनमें पहाड़ी झरने की चंचलता, सागर की गंभीरता एवं सरिता की प्रवाहशीलता है।‘‘ लोकगीत सार्वजनिक, सार्वदेशिक एवं सार्वकालिक है। दस दिशाओं में इनका अखंड साम्राज्य है। ये अजर-अमर हैं। लोकगीत विशाल वटवृक्ष के समान हैं। लोकगीत न पुराना होता है न नया, वह तो जंगल के एक वृक्ष के समान होता है, जिसकी जड़ें तो धरती में दूर तक (भूतकाल में) धँसी हुई होती है, किंतु जिसमें नित्य नई-नई डालियाँ, पल्लव और फूल लगते रहते हैं।

 इससे स्पष्ट होता है कि लोकगीत पारंपरिक होते हुए भी नित्य नूतन हैं, अक्षुण्ण हैं। काल के क्रूर हाथ भी इन्हें मिटा नहीं सकते। सरसता, सरलता, स्वाभाविकता एवं मधुरता लोकगीतों की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

 गीतों का राजस्थानी जन जीवन में बहुत महत्व है। इनके बिना जीवन नीरस एवं शुष्क होता है। वास्तव में राजस्थानी नारी ने इतना गाया, इतना गाया कि हम उसकी गिनती नहीं कर सकते। गान मनुष्य के लिए स्वाभाविक है। सुख हो या दुःख मनुष्य गाए बिना नहीं रह सकता। सुख में गाकर उल्लसित होता है तो दुःख में गाकर दुःख भूलता है। राजस्थानी संस्कृति बड़ी अनूठी एवं रंगों से भरी हुई है। राजस्थान के लोगों का जीवन बड़ा कठिन एवं श्रमसाध्य है। यहाँ का जनमानस कठोरता में भी सरलता एवं सरसता ढूँढ ही लेता है। लोकगीतों की मिठास कटु एवं तिक्त जीवन में सरसता घोल देती है। यही कारण है कि चिलचिलाती धूप में हल चिलाता किसान, पत्थर तोड़ता मजदूर गीत गाकर श्रम की थकान को भुला देता है। मरुभूमि की भीषण शून्यता का मान भुला देता है। गाड़ी की ढचक-ढचक ध्वनि के साथ सुर मिलाता हुआ बैलगाड़ी वाला कोसों दूर चला जाता है। तो गडरिया भेड़ चराता हुए अपनी गीत से सम्पूर्ण जंगल को प्रतिध्वनित कर देता है।

 इतना ही नहीं घर के भीतर अनाज फटकती सास, चक्की चलाती हुई बहु और कुएँ पर पानी भरती पनिहारिन गीत गाकर कठोर श्रम का परिहार करती है। देखा जाए तो संपूर्ण गृहस्थ जीवन नारी का ही गान है। नारी ने ही कहीं माँ के रूप में मधुर लोरी गाकर अपने लाडलों को सुलाया एवं जगाया है। कहीं गीतों से पत्नी ने मान-मनावन किए। कहीं नवोढ़ा ने प्रवासी प्रिय की याद में ओळू व हिचकी गाई है। कागा व कुरजां के हाथ संदेश भेजे। कहीं विरहिणी ने अपने गीत के द्वारा पिया से सूनी सेज की शिकायत की। कहीं सास-नणद के तानों से संतप्त बहिन ने अपने गीत में जामण जाया वीर को पुकारा। संयोग के क्षणों में शृंगारिक सरस गीत गाये तो वियोग के क्षणों में कलेजा चीर देने वाले मार्मिक गीत। इतना ही नहीं गर्भस्थ शिशु को भी गीत रस पिलाया। जन्म पर ’हालरा‘ गाया। नामकरण हो या जनेऊ या विवाह या फिर उत्सव, त्यौहार, धार्मिक अनुष्ठान सभी अवसरों पर गीतों का रस उंडेला। यहाँ तक कि जीवन की कटु सच्चाई मृत्यु पर भी भक्ति एवं निवृत्ति के गीत गाए। कहने का अभिप्राय यह है कि राजस्थान में बिना लोकगीतों के कोई भी कार्य सम्पन्न नहीं होता।

 लोकगीत मानव जीवन को प्रमुदित करने वाली अचूक औषधि है। लोकगीत मानसिक प्रवृत्तियों का परिष्कार करके सुख-शांति प्रदान करते हैं। दुःख की बेला में सहनशक्ति व धीरज देते हैं तो सुख में मन को उल्लसित करते हैं। ये प्रताड़ित को संबल देते हैं, तो पथभ्रष्ट का मार्गदर्शन करते हैं और मोहजाल में फँसे व्यक्ति को सदुपदेश भी देते हैं। नानूराम संस्कर्ता लिखते हैं कि, ’’लोकगीत न होते तो संसार दुखी और निराशामय होता। लोकगीत विषाद को मिटाने, शोक को समेटने एवं दुःख को मेटने वाले नित नए उपदेश हैं।‘‘

 लोकगीतों में किसी देश का इतिहास, संस्कृति एवं नैतिक आदर्श निहित रहते हैं तभी तो लाला लाजपतराय कहते हैं कि, ’’देश का सच्चा इतिहास और उसका नैतिक और सामाजिक आदर्श इन गीतों में ऐसा सुरक्षित है कि इनका नाश हमारे देश के लिए दुर्भाग्य की बात होगी।‘‘